ऋषभ देव शर्मा की साठ तेवरियाँ

तरकश

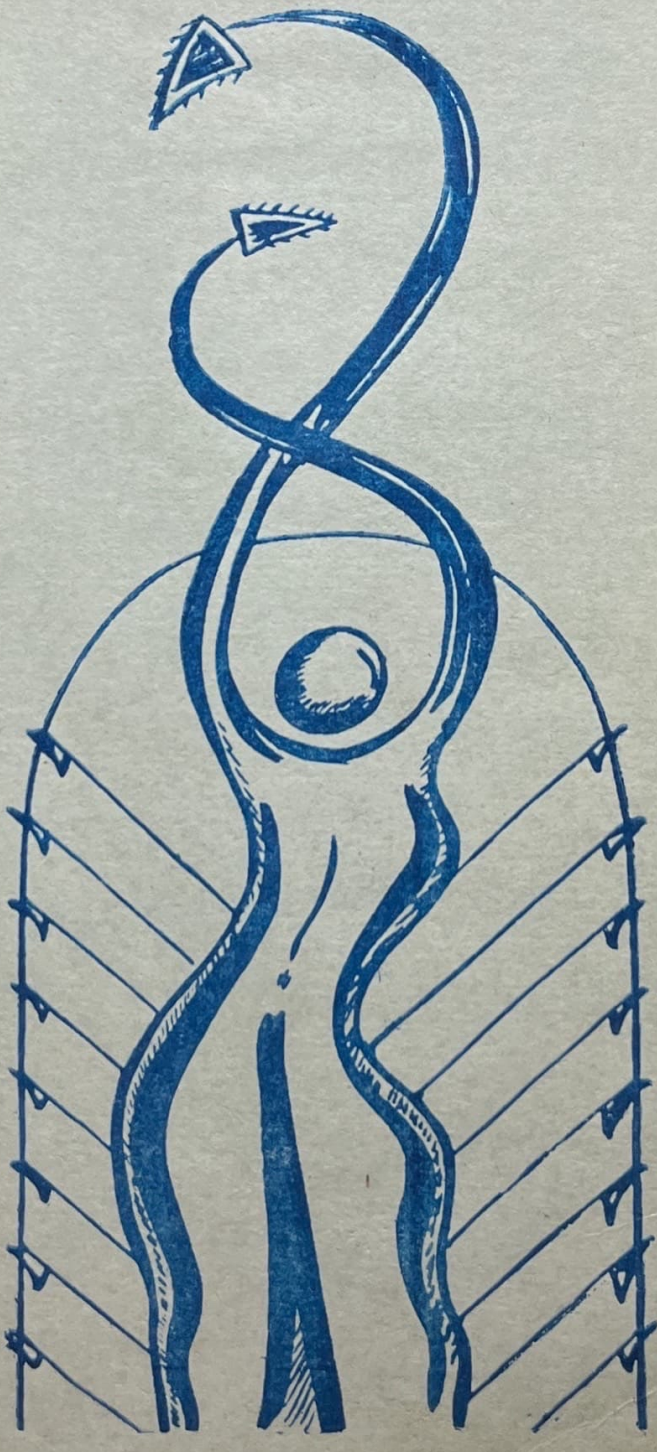

तरकश

ऋषभदेव शर्मा

तेवरी प्रकाशन
खतौली

तरकश (तेवरी संग्रह, हिन्दी)/ऋषभदेव शर्मा/प्रथम संस्करण, 1996/ तेवरी प्रकाशन, शास्त्री निकेतन, गीतापुरी, पटेल नगर, खतौली-251201/© ऋषभ देव शर्मा/मुद्रक : अक्षर आर्ट प्रिन्टर्स, 12/3-श्यामपुरी, खतौली-251201 / आवरण : प्रो० नीतू वशिष्ठ

मूल्य : पचास रुपए

अग्रिम पंक्ति के
तेवरीकार मित्रों—

स्वर्गीय
बृजपाल शौरमी
और
हरिराम चमचा
की
पुण्य स्मृति
में.....

तीर

आदि कवि के प्रथम श्लोक से लेकर आज तक कविता कभी मरुस्थल बन गई हो, ऐसा इतिहास हाथ नहीं लगा। हाँ उसके प्रवाह का पानी कभी चढ़ता तो कभी उतरता अवश्य रहा। बूंद-बूँद बनकर भी कविता ने अपनी जिजीविषा को बनाये रखा। इतिहास इसका साक्षी है। कविता के लय, ताल, छन्द, स्वर आदि समय-समय पर परिवर्तित होते रहे। राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, वैज्ञानिक तथा विभिन्न विचारधाराओं से जुड़ी परिस्थितियों का उस पर प्रभाव पड़ा। स्वातन्त्र्योत्तर कविता नई उमंग लेकर आगे बढ़ी तो "1950 में राष्ट्रीय स्तर पर महान परिवर्तन आये,कविता ने भी नये परिवर्तन को स्वीकार किया। छायावाद की सूक्ष्म रहस्यवादी खोजबीन, प्रगतिवाद की राजनैतिक नारेबाजी तथा कथित प्रयोगवाद की कामकुण्ठाओं तथा देश की स्वतन्त्रता के लिए रक्त होम देने की लडाकू अभिव्यक्ति से अलग हटकर कविता ने गम्भीर दृष्टि अपनाने की घोषणा की। कविता के इस नये मोड को 'नई कविता आन्दोलन' कहा गया।" विश्वास के परिपूर्ण इस काव्यान्दोलन की प्रारम्भिक अभिव्यक्तियाँ सार्थक थी चूँकि जन सामान्य की आकांक्षाओं के कथ्य को उजागर करने के उद्देश्य को लेकर ये सामने आ रही थी। लेकिन ज्यों-ज्यों राष्ट्र की राजनैतिक परिस्थितियों में बदलाव आया त्यों-त्यों कविता अपने में परिवर्तन नहीं ला सकी। कविता नित्य नये आन्दोलनों के कारण अपने वास्तविक दायित्व से भटक गई और तब कविता

सेक्स कुण्ठा निराशा, सन्त्रास, भय, गाली और बलात्कार का प्रतिरूप बनकर बैठ गई।

11 जनवरी, 1982 को तेवरी की प्रथम वर्षगाँठ पर 'तेवरी काव्यान्दोलन को घोषणा पत्र' प्रकाशित और प्रसारित हुआ। कविता के सन्दर्भ में इस काव्यान्दोलन से अनन्त सम्भावनाएँ बनीं। नवजागरण की पृष्ठभूमि में आन्दोलनों ने महत्व को अस्वीकार करना हठधर्मिता के साथ-साथ घातक भी होता है। उक्त तेवरी घोषणापत्र में कविता को परिभाषा, उद्देश्य और उससे सम्बन्धित विविध परिस्थितियों की विशद चर्चा है। स्वीकार करने योग्य यथार्थ है कि "कविता जीवन के सर्वाधिक निकट स्थापित वह प्रकाश-पुंज है, जिससे प्रत्येक मनुष्य को संचेतना मिलती हैं। युग जोवन को अपने में समेटना, समय के सत्य को पकड़ना, मनुष्य को बिना किसो आग लपेट के सम्बोधित करना, प्रकाश और उष्णता की संघर्षशील संस्कृति को स्थापना करना और प्रत्येक व्यक्ति के भोतर दायित्व बोध का विकास करके क्रान्ति की भूमिका तैयार करना कविता का दायित्व है। जिस युग को कविता इससे अलग भूमिका स्वीकार कर लेती है,वह युग अव्यवस्था से भर जाता है।" पाठक जन जांचें कि कविता के सन्दर्भ में कही गई उक्त टिप्पणी कितनी सार्थक है ? मैं मान रहा हूँ कि आपात्कालीन कविता अपने चारित्रिक पतन की पराकाष्ठा से स्वत: नष्ट हो गई। नवें और दशवें दशक की कविता में प्राणतत्व की कमी नहीं है। नामोल्लेख करने का यहाँ अवसर नही है। आपको नहीं लगता कि वर्तमान समय में भ्रष्टाचार, दलबदल, घोटाले, राजनीति के अपराधीकरण, महँगाई, अराजकता और अव्यवस्था का बोलबाला है। मजदूर और मालिक के बोच की दूरी मिटने का नाम नही ले रही है। व्यक्ति के भोतर दायित्वबोध जगाने का काय तेवरी कविता के

प्रसार से असंभव नहीं है। युग की आवश्यकता भी यही है। कविता खोई हुई चेतना को पुनः वापस लाने का एक सशक्त माध्यम है।

डॉ० ऋभवदेव शर्मा के 'तरकश' के 'तीरों' की तीक्ष्णता से विश्वास होता है कि ये अपने लक्ष्य को अवश्य वेध पायेंगे। आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, धार्मिक, साम्प्रदायिक और अन्यान्य विषमताओं को बेधने वाले तीरों से इनका तरकश परिपूर्ण है। जो लेखक और कवि जन-जन की समस्याओं को आज भी अनदेखा कर रहे है, उन्हें तरकश का एक तीर (तेवरी) काफी है .... अब न बालों और गालों की कथा लिखिए/देश लिखिए-देश का असली पता लिखिए/एक जंगल, भय अनेकों, बघनखे, खंजर/ नाग को ले जायें ऐसी सभ्यता लिखिए/शोरगुल में धर्म के, भगवान के यारो/आदमी होता कहाँ–कब लापता ? लिखिए.....

जन साधारण की कठिनाइयों को तेवरीकार ने गहरे पैठकर समझा है। चिन्तन-मनन भी किया है। मैं चाहता हूँ उनके तरकश के तीर, धनुष पर चढ़ें, धनुर्धारी उनका सफल प्रयोग करें और उक्त तमाम निराशाजनक अव्यवस्थाओं के विनाश करने की चेतना को प्रस्फुटित करें। डॉ० ऋषभ की तेवरियों का यह संग्रह रचना-धर्मियों को न केवल ग्राह्य होगा अपितु नई दिशा भी प्रदान करेगा। काव्य-प्रवाह को केवल तीर पर बैठकर देखते रहने का समय अब नहीं है। पाठक को भी कुछ करना चाहिए।

नजीबाबाद/11 जनवरी '96 —डा० प्रेमचन्द्र जैन

तरकश

अब न बालों और गालों की कथा लिखिए 13
मैं हिन्दू हूँ मैं मुस्लिम हूँ मैं मस्जिद हूँ मैं मन्दिर हूँ 14
बौनी जनता, ऊँची कुर्सी, प्रतिनिधियों का कहना है 15
धुन्ध है घर में उजाला लाइए 16
आदमकद मिल जाए कोई दल-दल द्वार-द्वार भटका 17
हटो, यह रास बन्द करो 18
उगी रोटियाँ देख बाली गेहूँ की 19
शक्ति का अवतार हैं ये रोटियाँ 20
यह नए दिन का उजाला देख लो 21
कुछ लोग जेब में उसे धर घूम रहे हैं 22
जब नसों में पीढ़ियों की, हिम समाता है 23
हर दिन बड़ा है आपका अपना न एक दिन 24
एक ऊँचा तख्त जिस पर भेड़िया आसीन हैं 25
एक नेता मंच पर कल से रो पड़ा 26
किसी को भून डालें वे, हाथ में स्टेनगन लेकर 27
पुरखों ने कर्ज लिया, पीढ़ी को भरने दो 28
कच्ची नीम की निबौरी, सावन अभी न अइयो रे 29
माला टोपी ने मिल करके कुछ ऐसा उपचार किया 30
हँस के हरेक जहर को पी जाय फकीरा 31
एक बड़े ऊँचे फाटक से, आग उठी, सड़कों लहरी 32

अब भारत नया बनाएँगे, हम वंशज गाँधी के 33
गलियों की आवाज आम है, माना खास नहीं होगी 34
योगी बन अन्याय देखना, इसको धर्म नहीं कहते है 35
मंच पर केवल छुरे हैं, या मुखौटे हैं 36
दृष्टि धुँधली, स्वाद कड़ुआने लगा 37
पग पग घर घर हर शहर, ज्वालामय विस्फोट 38
कुर्सी का आदेश कि अब से, मिलकर नहीं चलोंगे 39
माना कि भारतवर्ष यह, संयम की खान है 40
नस्ल के युद्ध है 41
हिंसा की दुकान खोलकर, बैठे ऊँचे देश 42
लोकशाही के सभी सामान लाएँगे 43
अपने हक में वोट दिलाके, क्या उत्तो के पाथोगे 44
पाक सीमा पर बसे इक, गाँव में यह हाल देखा 45
क्या हुआ जो गाँव में, घर-घर अँधेरा है 46
धार लगाकर सब आवाजें, आरी करनी हैं 47
औंधी कुर्सी उस पर पण्डा 48
कुर्ते की जेबें खाली हैं, औ' फटा हुआ है पाजामा 49
मानचित्र को चीरती, मजहब की शमशीर 50
सभी अंग बदरंग हैं कैसे खेलूं रंग 51
लोगों ने आग सही कितनी 52
मिलीं शाखें गिलहरी को इमलियों की 53

रक्त का उन्माद हैं ये, युद्ध की बात 54
झुग्गियों को यों हटाया जा रहा है 55
घर के कोने में बैठे हो लगा पालथी, भैया जो 56
बोला कभी तो बोल को मुझको सजा मिली 57
ठीक है—जो बिक गया, खामोश है 58
क्या पता था खेल ऐसे खेलने होंगे 59
हो न जाए मान में घाटा किसी के यों 60
पेट भरा हो तो सूझे है,ताजा रोटी बासी रोटी 61
राजपथों पर कोलाहल है,संविधान की वर्षगाँठ है 62
रात उनके नाचघर में आ गई वर्षा 63
आज हाथों को, सुनो, आरी बना लो, साथियो 64
घर से बाहर नहीं निकलना, आज शहर में कर्फ्यू है 65
हर दफ्तर में एक बड़ी सी, कुर्सी पाई जाती है 66
आग के व्यापारियों ने बाग को झुलसा दिया 67
चोरों का सम्मान, आजकल मेरे भैया 68
सुनो, बगावत कर रहे, अब सरसों के खेत 69
शहर तुम्हारा ? हमने देखा शहर तुम्हारा 70
धर्म, भाषा, जाति, दल का; आजकल आतंक है 71
काव्य को अंगार कर दे, भारती 72

तरकश

✓ अब न बालों और गालों की कथा लिखिए
देश लिखिए, देश का असली पता लिखिए

✓ एक जंगल, भय अनेकों, बघनखे, ख़ंजर
नाग कीले जायें ऐसी सभ्यता लिखिए

✓ शोरगुल में धर्म के, भगवान के, यारो !
आदमी होता कहाँ-कब लापता ? लिखिए

✓ बालकों के दूध में किसने मिलाया विष ?
कौन अपराधी यहां? किसकी ख़ता? लिखिए

✓ वे लड़ाते हैं युगों से शब्दकोषों को
जो मिलादे हर हृदय वह सरलता लिखिए

✓ एक आँगन, सौ दरारें, भीत दीवारें
साजिशों के सामने अब बन्धुता लिखिए

✓ लोग नक्शे के निरन्तर कर रहे टुकड़े
इसलिए यदि लिख सकें तो एकता लिखिए

मैं हिन्दू हूँ मैं मुस्लिम हूँ मैं मस्जिद मैं मन्दिर हूँ
मैं पूजा हूँ मैं नमाज़ हूँ म्लेच्छ और मैं क़ाफ़िर हूँ

मैंने अस्मत लूटी मैंने छुरा घोंप कर मारा है
ऐसे पुण्य कमाया वैसे अपराधी मैं शातिर हूँ

मैंने कलियों को रौंदा है मैंने फूलों को मसला
माली की नज़रों से फिर भी ओझल हूँ मैं जाहिर हूँ

मैंने जाम पिलाए सबको मैंने ज़हर मिलाया है
आग लगाकर हाथ सेंकने लड़वाने में माहिर हूँ

मैं तो ईश्वर का बन्दा हूँ देश-वेश मैं क्या जानूँ
मेरठ या कश्मीर लखनऊ जहां कहो मैं हाज़िर हूँ

बौनी जनता, ऊँची कुर्सी, प्रतिनिधियों का कहना है
न्यायों को कठमुल्लाओं का बन्धक बनकर रहना है

वोटों की दूकान न उजड़े, चाहे देश भले उजड़े
अन्धी आँधी में चुनाव की, हर संसद को बहना है

टोपी वाले बांट रहे हैं, मन्दिर मस्जिद गुरुद्वारे
इस बटवारे को चुप रहकर, कितने दिन तक सहना है

देव तक्षकों के रक्षक हैं, दूध और विष की यारी
मेरठ या कश्मीर सब कहीं, यही रोज़ का दहना है

हम प्रकाश के प्रहरी निकले, क़लमें तेज़ दुधारी ले
सूरज इतने साल गह चुका, राहु-केतु को गहना है

धुन्ध है घर में उजाला लाइए
रोशनी का इक दुशाला लाइए

केचुओं की भीड़ आँगन में बढ़ी
आदमी अब रीढ़ वाला लाइए

जम गया है मोम सारी देह में
गर्म फ़ौलादी निवाला लाइए

जूझने का जुल्म से संकल्प दे
आज ऐसी पाठशाला लाइए

✓ आदमकद मिल जाए कोई, दल-दल द्वार-द्वार भटका
लोकतन्त्र की इस लंका में, हर कोई बावन गज़ का

✓ सबके हाथों में झण्डे हैं, सबके माथों पर टोपी
सबके होठों पर मारे हैं, पानी उतर चुका सबका

✓ क्रूर भेड़िए छिपकर बैठे, नानी की पोशाकों में
'नन्हीं लाल चुन्नियों' का दम, घुट जाने की आशंका

✓ ठीक तिजोरी के कमरे की, दीवारों में सेंध लगी
चोरों की टोली में शामिल, कोई तो होगा घर का

काले जादू ने मनुष्य बन्दूकों में तब्दील किया
अब तो मोह छोड़ना होगा, प्राण और कायरपन का

हटो, यह रास बन्द करो
हास–परिहास बन्द करो

यह क़लम है, खुरपी नहीं
छीलना घास बन्द करो,

गूँजती युद्ध की बोली
खेलना ताश बन्द करो

भूख का इलाज बताओ
यार ! बकवास बन्द करो

उगी रोटियां देख बाली गेहूँ की
पकी खड़ी हर खेत बाली गेहूँ की

सफ़र किया बाज़ारों का खलिहान ने
खाली-खाली पेट बाली गेहूँ की

गलियारों में होली की तैयारियाँ
उपजे बीज अनेक बाली गेहूँ की

मिले न अपना खून उनको मदिरा में
करे बग़ावत एक बाली गेहूँ की

टिड्डी–दल की खैर नहीं इस बार तो
ताने हुए गुलेल बाली गेहूँ की

शक्ति का अवतार हैं ये रोटियाँ
शिव स्वयं साकार हैं ये रोटियाँ

भूख में होता भजन, यारो नहीं
भक्ति का आधार हैं ये रोटियाँ

घास खाने के लिए कर दें विवश
अकबरी दरबार हैं ये रोटियाँ

और मत इनको उछालें आप अब
क्रान्ति का हथियार हैं ये रोटियाँ

तुम बहुत चालाक, टुकड़े कर रहे
युद्ध को तैयार हैं ये रोटियाँ

टोपियों का चूर कर दें राजमद
दर-असल सरकार हैं ये रोटियाँ

तलधरों की कैद को तोड़ें, चलो
मुक्ति का अधिकार हैं ये रोटियाँ

यह नए दिन का उजाला देख लो
सूर्य के हाथों में भाला देख लो

धूप बरछी ले उतरती भूमि पर
छंट रहा तम अन्ध पाला देख लो

भूख ने इतना तपाया भीड़ को
हो गया पत्थर निवाला देख लो

फूटने के पल सिपाही जन रहा
किस तरह हर एक छाता देख लो

शान्त था कितने दिनों से सिन्धु यह
आज लेता है उछाला देख लो

कुछ लोग जेब में उसे धर घूम रहे हैं
सबसे विशाल विश्व में जो संविधान है

हर बार हर चुनाव में बस सिद्ध यह हुआ
जितना चरित्रहीन जो उतना महान है

ये वोट के समीकरण समझा न आदमी
कुर्सी की ओर हर शहीद का रुझान है

वे सूत्रधार सम्प्रदाय-युद्ध के बने
बस एकता–अखण्डता जिनका बयान है

गूँगा तमाशबीन बना क्यों खड़ा है तू ?
तेरी कलम, कलम नहीं, युग की ज़बान है

जब नसों में पीढ़ियों की, हिम समाता है
शब्द ऐसे ही समय तो काम आता है

बर्फ पिघलाना ज़रूरी हो गया, चूँकि
चेतना की हर नदी पर्वत दबाता है

बालियों पर अब उगेगें धूप के अक्षर
सूर्य का अंकुर धरा में कुलबुलाता है

हर दिन बड़ा है आपका, अपना न एक दिन
सब छूरियाँ ठूँठी पड़ीं, कटता न केक दिन

सूरज बदन पे झलता, मौसम की लाठियां
बदले मिजाजं अभ्र का, खोता विवेक दिन

कुछ गालियाँ देकर कभी, कुछ बांट गोलियाँ
तुम छल चुके हमको, सुनो, अब तक अनेक दिन

कुछ हाथ बढ़ रहे इधर, तुमको तराशने
आकाशबेल ! खेल लो, जी लो कुछेक दिन

रोटी जहाँ गिरवी धरी, वह जेल तोड़ दें
अब मुक्त करना है हमें, बन्दी हरेक दिन

एक ऊँचा तख्त जिस पर भेड़िया आसीन है
और मन्दिर में सपेरा मन्त्रणा में लीन है

बात पगड़ी और टोपी की यहाँ तक बढ़ गई
नाचते षड़यन्त्र, बजती देशद्रोही बीन है

दे रहे उपदेश में गुरू गोलियाँ उन्माद की
आज पूजा के प्रसादों में मिली कोकीन है

शूल पांवों के निकालें, शूल लेकर हाथ में
यह समय की है ज़रूरत, नीति यह प्राचीन है

एक नेता मंच पर कल रो पड़ा
लोग बोले – हो गया अचरज बड़ा

जिस तरफ कुर्सी मिले उस ओर ही
दौड़ जाता "देशभक्तों" का धड़ा

साम्प्रदायिकता मिटाने के लिए
दल-समर्थित जाति का प्रतिनिधि खड़ा

एक चिड़िया ने तड़प कर यों कहा
हर समुन्दर स्नान से इनके सड़ा

कब घड़ी होगी कि जब यह जनसभा
फोड़ देगी पाप का इनके घड़ा

किनी को भून डालें वे, हाथ में स्टेनगन लेकर
इन्हें क्या, मौत को ये तो, भुना लेंगे चुनावों में

गला जिनका तराशा है, निरन्तर पाँच वर्षों तक
उन्हें भी अब गले अपने, लगा लेंगे चुनावों में

कभी जिस गाँव को जाना न देखा, मर रहा कैसे
उसी के अब मसीहा बन, दिखा देंगे चुनावों में

देश टूटे, रहे, जाए, इन्हें क्या काम, इनको तो
सिर्फ कुर्सी दिला दीजे, दुआ देंगे चुनावों में

कब्र में पाँव लटके हैं, कण्ठ में प्राण हैं अटके
बहुत वोटर खरीदेंगे, जिता देंगे चुनावों में

खिलाड़ी मंच पर उतरे मदारी मंच के पीछे
आँकड़ों की बहुत कीचड़ उछालेंगे चुनावों में

लगाकर घात बैठे हैं, पक्ष-प्रतिपक्ष दोनों ही
बहुत चालाक मछुए ये, पैसा लेंगे चुनावों में

हमारे हाथ में मोहर, हमारे हाथ में मुहरा
दुरंगे लोकद्रोही को, सज़ा देंगे चुनावों में

पुरखों ने कर्ज लिया, पीढ़ी को भरने दो
अपराधी हाथों की, जासूसी करने दो

कर रहा हवा दूषित, भर रहा नसों में विष
मत तक्षक को ऐसे, उन्मुक्त विचरने दो

आया था लोकतन्त्र, वर्षों से सुनते हैं
छेदों से भरी-भरी, नौका यह तरने दो

यातना-शिविर जिसने, यह शहर बनाया है
पापों का धर्मपिता, मुख आज उघरने दो

जनगण के प्रहरी बन, सड़कों पर निकलो तुम
लो लक्ष्य बुर्जियों के, द्रोही सब मरने दो

कच्ची नीम की निंबौरी, सावन अभी न अइयो रे
मेरा शहर गया होरी, सावन अभी न अइयो रे

कर्ज़ा सेठ वसूलेगा, गाली घर आकर देगा
कड़के बीजुरी निगोरी, सावन अभी न अइयो रे

गब्बर लूट रहा बस्ती, ठाकुर मार रहा मस्ती
क्वाँरी है छोटी छोरी, सावन अभी न अइयो रे

चूल्हा बुझा पड़ा कब का, रोज़ा रोज़ाना सबका
फूटी काँव की कटोरी, सावन अभी न अइयो रे

छप्पर नया बना लें हम, भर लें सभी दरारें हम
मेघा करे न बरजोरी, सावन अभी न अइयो रे

खुरपी ले आए धनिया, जग जाएँ गोबर-झुनिया
हँसियाँ ढूँढ रही गोरी सावन अभी न अइयो रे

माला-टोपी ने मिल करके कुछ ऐसा उपचार किया
भारत-पुत्रों ने भारत के पुत्रों का संहार किया

ऊँची बुर्जी के तलघर में ज्वाला का भण्डार किया
मेरे अमरित के सरवर में कटु विष का संचार किया

इसी नवम्बर में बस्ती में बेमौसम के बर्फ गिरी
पगली एक हवा ने सबको घर से बेघरबार किया

धूप चढ़े पर श्वेत कबूतर जभी घोंसले से निकला
बलि पूजा के काले पंजों ने गरदन पर वार किया

परखनली में नेता भरकर कब से यह जनता बैठी
कुर्सी पर पधरे लोगों ने बहुत गुप्त व्यापार किया

विश्वासों के हत्यारों को जीने का अधिकार नहीं
यही फ़कीरा ने सोचा है जितनी बार विचार किया

लोकद्रोह के सब षडयन्त्रों के हम शीश तराशेंगे
लोकतन्त्र की सान चढ़ाकर शब्द-शब्द हथियार किया

हँस के हरेक जहर को पी जाय फ़कीरा
सच बोलता हुआ नहीं घबराये फ़कीरा

खिल जाय धूप गाँव में हो जाय सवेरा
जो रात के अँधेर में जग जाय फ़कीरा

आकाश का सुमन मिले यह सोच सूलियाँ
हर बार हर चुनाव में चढ़ जाय फकीरा

पदचाप लोकतन्त्र की बस एक पल सुने
फिर पाँच साल तक तके मु ह बाय फकीरा

उसको न रक्तपात से तुम मेट सकोगे
सम्भव नहीं कि खौफ़ से मर जाय फ़कीरा

आजन्म तेज़ आँच में इतना तपा-गला
इस्पात की चट्टान में ढल जाय फ़कीरा

सबके नक़ाब नोंच दे बाजार में अभी
अपनी प' मेरे यार ! जो आ जाय फ़कीरा

एक बड़े ऊँचे फाटक से, आग उठी, सड़कों लहरी
सावधान, सच के प्रह्लादों ! इसमें है साजिश गहरी

दाग रहे वे हर जुबान को, आँख-आँख को वेध रहे
उनके कर्म विधान स्वयं ही, उनकी बात ऋचा ठहरी

कानों में सीसा डाले वे, शीशमहल में सोए हैं
उनकी वर्दी वाली पीढ़ी, सारी की सारी बहरी

बाजारों में ख़बर गर्म है, बिना बिकी कलमें तोडें
लोक जलाकर तन्त्र बचाएँ, लोकतन्त्र के वे प्रहरी

जले हुए अख़बार देखकर, कल मेरी बिटिया बोली :
सब ग्वाले मिल यों नाचें, कुचल जाय कालिय ज़हरी

अब भारत नया बनाएँगे हम वंशज गाँधी के
पुस्तक-अख़बार जलाएँगे, हम वंशज गाँधी के

जनता की पीर हुई बासी, क्या मिलना गाकर भी
बस वंशावलियां गाएँगे. हम वंशज गाँधी के

बापू की बेटी बिकी अगर, इसमें हम क्या कर लें
कुछ नारे नए सुझाएँगे हम वंशज गाँधी के

खाली हाथों से शंका है, अपराध न हो जाए
इन हाथों को कटवाएंगे हम वंशज गाँधी के

रथ यात्रा ऊँची कुर्सी की, जब-जब भी निकलेगी
पैरों में बिछते जाएँगे, हम वंशज गाँधी के

गलियों की आवाज़ आम है, माना ख़ास नहीं होगी
हीरे की यह आब, घिसो तुम, घिसकर काँच नहीं होगी

जनता के मुँह पर अंगारे, वर्दी वालों ने मारे
कुर्सी वालों का कहना है, इसकी जाँच नहीं होगी

सरकारी मिल में कुछ ईंधन, ऐसा ढाला जाएगा
चमक-दमक तो लूक-लपट सी, लेकिन आँच नहीं होगी

नाच रहा क़ानून जुर्म की, महफ़िल में मदिरा पीकर
उन्हें बता दो : किन्तु दुपहरी, तम की दास नहीं होगी

जनमेजय ने एक बार फिर, नाग यज्ञ की ठानी है
नियति धर्म पुत्रों की फिर से, अब वनवास नहीं होगी

योगी बन अन्याय देखना, इसको धर्म नहीं कहते हैं
धर्म ध्वजी तो धर्म नाम पर, अत्याचार नहीं सहते हैं

नन्हीं मुझसे रोज़ पूछती, क्या अन्तर अड्डे–मन्दिर में
ऊँजी बुर्जी की छाया में, ऊँचे अपराधी रहते हैं

धुआँ-धुआँ भर दिया गगन में, घर-घर में बारूद धर दिया
पग-पग पर ज्वालामुखियों के, विस्फोटों में जन दहते हैं

बहुत हुआ उन्माद रक्त का, बहुत किश्तियाँ लूट चुके हैं
जब जनगण का ज्वार उफनता, पौत दस्युओं के बहते हैं

बाजों के मुँह खून लगा है, रोज़ कबूतर वे मारेंगे
आप मचानों पर चुप बैठे, कैसा पुण्य लाभ लहते हैं

मंच पर केवल छुरे हैं, या मुखौटे है
हो गए नाखून लम्बे, हाथ छोटे हैं

वे भला कब बाज़ आए, खून पीने से
योजना छल-छदल हिंसा, कर्म खोटे हैं

हम न समझौता करेंगे, चाकुओं से इन
देश की पसली अभी ये, चीर लौटे हैं

यों धमाके रोज़ घर में जो रहे होते
गिर पड़ेंगे ये बच्चे जो भीत ओटे हैं

हाथ मन्त्रित शूल लेकर, यार ! निकलो अब
हर सड़क पर हर गली में, साँप लोटे हैं

दृष्टि धुँधली स्वाद कड़ुआने लगा
साजिशों का फिर धुआँ छाने लगा

धर्म ने अन्धा किया कुछ इस तरह
आदमी को आदमी खाने लगा

भर दिया बारूद गुड़िया चीर कर
झुनझुनों का कण्ठ हकलाने लगा

दैत्य 'मानुष–गन्ध–सूँ सा' खोजता
दाँत औ' नाखून पैनाने लगा

नाभिकी–बम सूँड में थामे हुए
हाथियों का दल शहर ढाने लगा

यह मनुजता को बचाने की घड़ी
मुट्ठियों में ऐंठ सा आने लगा

पग-पग घर-घर हर शहर, ज्वालामय विस्फोट
कुर्सी की शतरंज में, हत्यारी हर गोट

आग लगी इस झील में, लहरें करतीं चोट
ध्वस्त न हो जाएँ कहो, सारे हाउस वोट

कुर्ता कल्लू का फटा, चिरा पुराना कोट
पहलवान बाजार में, घुमा रहा लंगोट

सीने को ये सी रहे, तलवारों से होंठ
गला किन्तु गणतन्त्र का, नहीं सकेंगे घोट

जिनका पेशा खून है, जिनका ईश्वर नोट
उन सबको नंगा करो, जिनके मन में खोट

कुर्सी का आदेश कि अब से, मिलकर नहीं चलोगे
पड़ें लाठियाँ चाहे जितनी, चूँ तक नहीं करोगे

लोकतन्त्र के मालिक कहते, रोटी तभी मिलेगी
मान पेट को बड़ा, जीभ को रेहन जभी धरोगे

हाथ कटेंगे अगर क़लम ने, सच लिखने की ठानी
करो फैसला, झूठ सहो या सच के लिए मरोगे

गिरे दण्डवत अगर भूमि पर, जीवित मर जाओगे
कायरता का मोल युगों तक पिटकर सदा भरोगे

यह गुँगों की भीड़ कि इसकी, वाणी तुम्हीं बनोगे
राजपथों से फुटपाथों के, हक़ के लिए लड़ोगे

माना कि भारतवर्ष यह, संयम की खान है
झण्डे के बीच चक्र का, लेकिन निशान है

अब क्यों न फूल हाथ में तलवार थाम लें
जब तीर बन हवा चली, झोंका कमान है

पागल हुआ हाथी, इसे गोली से मार दें
यह राय बस मेरी नहीं, सबका बयान है

संसद बचा सकी नहीं, कुर्सी ने खा लिया
कितना निरीह देश का, यह संविधान है

उबला समुद्र शान्ति का, थामे न थमेगा
इसको न और आँच दो, किस ओर ध्यान है

नस्ल के युद्ध हैं
रंग के युद्ध हैं

युद्ध हैं जाति के
धर्म के युद्ध हैं

मेल को तोड़ते
भेद के युद्ध हैं

देश के तो नहीं
पेट के युद्ध हैं

लोक सेवा कहाँ ?!
वोट के युद्ध हैं

जीतने जो हमें
सोच के युद्ध हैं

हिंसा को दुकान खोलकर, बैठे ऊँचे देश
आशँका से दबी हवाएँ, आतंकित परिवेश

अन्तरिक्ष तक पहुंच गया है, युद्धों का व्यापार
राजनीति ने नक्षत्रों में, भरा घृणा-विद्वेष

गर्म हवाओं के पंखों पर, लदा हुआ बारूद
'खुसरो' कैसे घर जाएगा, रैन हुई चहुं देश

महाशक्तियाँ रचा रही हैं, सामूहिक नरमेध
हाथ बढ़ाकर अभी खींच लो, कापालिक के केश

लोकशाही के सभी सामान लाएँगे
पाँच वर्षों पूर्व के महमान आएँगे

बर्फ के गोले बनाकर खेलते बच्चे
धूप चोरों को अभी पहचान जाएँगे

भीड़ भेड़ों की सजग है, कुछ नया होगा
खाल ओढ़ें भेड़िए नुकसान पाएँगे

रोष की आँधी चली तो हिल उठी दिल्ली
होशियारी के शिखर नादान ढाएँगे

उग रहा सूरज अँधेरा चीरकर फिर से
रोशनी का अब सभी जयगान गाएँगे

अपने हक में वोट दिलाके, क्या उत्ती के पाथोगे
दिल्ली के दरबार में जाके, क्या उत्ती के पाथोगे

कुलपतियों को मेज तोड़के, लड़के डिस्को करते हैं
ऐसे में इसकूल खुलाके, क्या उत्ती के पाथोगे

पाँच साल बाद आज वे, अपने गाँव पधारे हैं
ऐसे नेता को जितलाके, क्या उत्ती के पाथोगे

लम्बे कुर्तों के नीचे जो, पहने हैं राडार कई
उन यारों से हाथ मिलाके, क्या उत्ती के पाथोगे

बन्दूकों से डरे हुए जो, सन्दूकों से भरे हुए
ऐसों को मुखिया बनवाके, क्या उत्ती के पाथोगे

शैतानों की नरबलियों में, शामिल है भगवान यहाँ
भला यहाँ मन्दिर चिनवाके, क्या उत्ती के पाथोग

मुझ गँवार का प्रश्न यही है, संसद से, सचिवालय से
लोक गँवाके तन्त्र बचाके, क्या उत्ती के पाथोगे

पाक सीमा पर बसे इक, गाँव में यह हाल देखा
षोडशी मणि को निगलता, साठवर्षी ब्याल देखा

जब कभी झाँका किसी के, सोच में, ऐसा लगा बस
सड़ रहीं मुर्दा मछलियाँ, एक गदला ताल देखा

एक नेता जी चले थे, जो पतोड़ू खोजने को
आप उसको ब्याह लाए, जो पटाख़ा माल देखा

भीड़ में बिजली गिराते, अग्निमय भाषण सुने औ'
धर्म के नारे उठाकर, कौन चलता चाल देखा

देश की जब बात आई, एक मोमिन ने बताया
"मैं पढ़ा पर परदेस में हूँ", साजिशों का जाल देखा

तस्करी की योजनाएँ, अस्त्रशस्त्रों का जख़ीरा
ये मिले जब रोशनी में, खोल करके खाल देखा

जो फ़सल में ज़हर भरती, उस हवा को चीर डालो
गीध खेती नोंचते हैं, दृश्य यह विकराल देखा

क्या हुआ जो गाँव में, घर-घर अँधेरा है
सज गई संसद भवन में, दीपमाला तो

कुर्सियों की जीवनी में, व्यस्त दरबारी
शब्द से चाहे न टूटे, बन्द ताला तो

आज मेरे स्कूल की छत, गिर गई आखिर
खुल रहीं उनकी विदेशी, पाठशाला तो

भील–युवती ने कहा कल, ग्राम-मुखिया से
मार खाओगे अगर अब, हाथ डाला तो

झोंपड़ी पर लिख रहे वे, गीत रोमानी
दर्द, आंसू, पीर, सिसकी, घाव छाला तो

अब ज़रूरी अक्षरों में, आग भरना है
नोंक हो तीखी कलम की, तीर भाला तो

धार लगाकर सब आवाज़ें आरी करनी हैं
एक बड़े जलसे की अब तैयारी करनी है

फुलझड़ियों से खेल रहे वे आग नहीं जाने
अँधियारे तहख़ानों में बमबारी करनी है

ब्लैक-होल डसते जाते हैं सूरजमुखियों को
अस्थिचूड़ देकर पीढ़ी उजियारी करनी है

हर कुर्सी पर जमे हुए हैं मार्कोस, यारो!
न्यायालय में नंगी हर मक्कारी करनी है

औंधी कुर्सी उस पर पण्डा
पण्डे के पीछे मुश्टण्डा

गाँधी टोपी, भगुआ कुर्ता
और हाथ में हिटलर डण्डा

जनगण में बँट रहे निरन्तर
नारे भाषण प्रोपेगण्डा

मन्दिर की बुर्जी के ऊपर
लहराता दंगल का झण्डा

कोड़े खाते, पिटते उबला
कैसे खून भला हो ठण्डा

कुर्ते की जेबें खाली हैं, औ' फटा हुआ है पाजामा
इनको न भिखारी समझो तुम, ये करने निकले हंगामा

धक्के-मुक्के, गाली-गुस्सा, खा-पीकर इतने बड़े हुए
फुसला न सकोगे इनको तुम, दिखला करके चन्दामामा

दिल्ली वाले बाजीगर जी ! अब जाग उठा है शेषनाग
भागो, छोड़ो यह बीन-शीन, यह टोपी बालों का ड्रामा

मानचित्र को चीरती, मजहब की शमशीर
या तो इसको तोड़ दो, या टूटे तस्वीर

एल०ए०सी० के दो तरफ, एक कुटुम दो गांव
छाती का छाला हुआ, वह सुन्दर कश्मीर

आदम के कन्धे झुके, कन्धों पर भगवान
उसके ऊपर तख्त है, उलटे कौन फकीर

सेवा का व्रत धार कर, धौले चोगे ओढ़
छेद रहे सीमा, सुनो ! सम्प्रदाय के तीर

मुहर-महोत्सव हो रहा, पाँच वर्ष के बाद
जाति पूछकर बँट रही, लोकतन्त्र की खीर

घर फूँका तब बन सकी, यारो ! एक मशाल
हाथ लिए जिसको खड़ा बीच बजार कबीर

सभी अंग बदरंग हैं कैसे खेलूँ रंग
बौरांया तेरा शहर घुली कुएँ में भंग

पूजाघर के पात्र में राजनीति के रंग
या मज़हब के युद्ध हैं या कुर्सी की जंग

कम्प्यूटर पर बैठकर उड़े जा रहे लोग
मेरे काँधे फावड़ा मुझे न लेते संग

होली है पर चौक में नहीं तमाशा एक
कब से गूँगी ढोलकें बजी न कब से चंग

इनके महलों में रचा झोंपड़ियों का खून
बुर्जी वाले चोर हैं चोखा एक मलंग

ऐसी होली खेलियो खींच मुखौटे यार
असली चेहरा न्याय का देख सभी हों दंग

लोगों ने आग सही कितनी
लोगों ने आग कही कितनी

सेंकी तो बहुत बुखारी पर
बच्चों ने आग गही कितनी

संसद में चिनगी भर पहुंची
सड़कों पर आग बही कितनी

आँखों में कड़ुआ धुआँ-धुआँ
प्राणों में आग रही कितनी

हिम नदी गलानी है, नापें
कविता ने आग दही निकली

मिलीं शाखें गिलहरी को इमलियों की
छिन गईं लेकिन छटाएँ बिजलियों की

यह व्यवस्था है कि फेंको लेखनी को
चाहते हो खैरियत यदि उँगलियों की

न्याय को बन्धक बनाकर बन्दरों का
वे मिटाएँगे लड़ाई बिल्लियों की

आदमी की प्यास के दो होंठ सिलकर
प्राण रक्षा वे करेंगे मछलियों की

गीत के मेले लगाती राजधानी
चीख पिसती बजबजाती पसलियों की

आग सोई, लकड़ियाँ सीली हुई हैं
है ज़रूरत और सूखी तीलियों की

रक्त का उन्माद हैं ये, युद्ध की बातें
मृत्यु का सम्वाद हैं ये, युद्ध की बातें

एक धरती, एक राजा, लाख जौहर पर
विजव का अपवाद हैं ये, युद्ध की बात

हथकड़ी बेड़ी पहन लो, या मरो बम से
दमन का अनुवाद हैं ये, युद्ध की बातें

पाक बंगला चीन बर्लिन, बाड़-दीवारें
खेत घर आबाद हैं ये, युद्ध की बातें

जो बड़े, वे कर रहे, व्यापार शस्त्रों का
भेड़िया आस्वाद हैं ये, युद्ध की बातें

भेद को देते हवा जो, थाम लो कालर!
मुक्ति पर अपराध हैं ये, युद्ध की बातें

झुग्गियों को यों हटाया जा रहा है
शहर को सुन्दर बनाया जा रहा है

बँट रही हैं पट्टियाँ मुँह बाँधने को
मुक्ति का उत्सव मनाया जा रहा है

हर क़लम को जीभ धरकर नींव में अब
सत्य का मन्दिर चिनाया जा रहा है

भीड़ गूँगों की जमा है गोलघर में
पाठ भाषा का पढ़ाया जा रहा है

तीर को कुछ और पैना क्यों न कर लें !
नित नया चेहरा चढ़ाया जा रहा है

आख़िरी महफ़िल सजी है आज उनकी
शब्द उंगली पर नचाया जा रहा है

घर के कोने में बैठे हो लगा पालथी, भैया जी
खुले चौक पर आज आपका एक बयान जरूरी है

झण्डों-मीनारों-घण्टों ने बस्ती पर हल्ला बोला
चिड़िया चीखें, कलियाँ चटखें. शर सन्धान जरूरी है

मैं सूरज को खोज रहा था संविधान की पुस्तक में
मेरा बेटा बोला-पापा, रोशनदान जरूरी है

जिनके भीतर तंग सुरंगें, अन्धकूप तक जाती हैं
उन दरवाजों पर ख़तरे का, बड़ा निशान जरूरी हैं

बोला कभी तो बोल की मुझको सज़ा मिली
जो चुप रहा तो मौन की मुझको सज़ा मिली

मैं पंक्ति में पीछे खड़ा विराम की तरह
ज़ाहिर है, तेज दौड़ की मुझको सज़ा मिली

को थी दुआ तो शहर में अज्ञातवास की
मैं सैर करूँ भीड़ की मुझको सज़ा मिली

गाई तो मैंने आपकी प्रशस्तियाँ मगर
आलोचकीय जीभ की मुझको सज़ा मिली

मैंने कहा कि हे प्रभो ! मैं केंचुआ बनूँ
बदले में सीधी रीढ़ की मुझको सज़ा मिली

ठीक है—जो बिक गया, खामोश है
क्यों मगर सारी सभा खामोश है

जल रही चुपचाप केसर की कली
चीड़वन क्योंकर भला खामोश हैं

गरदनों पर उँगलियाँ विष-गैस की
संगमरमर का किला खामोश है

यह बड़े तूफान की चेतावनी
जो उमस में हर दिशा खामोश है

आ गई हाँका लगाने की घड़ी
क्यों अभी तक तू खड़ा खामोश हैं

क्या पता था खेल ऐसे खेलने होंगे
रक्त-आँसू गूँथ पापड़ बेलने होंगे

कुर्सियों पर लद गया है बोझ नारों का
यार, ये विकलांग नायक ठेलने होंगे

भर गया बारूद मेरी खाल में इतना
अब धमाके पर धमाके झेलने होंगे

हो न जाए मान में घाटा किसी के यों
सत्य कहने पर यहाँ प्रतिबन्ध है भैया

चोर को अब चोर कहना जुर्म है भारी
तस्करों का तख्त से सम्बन्ध है भैया

कलम सोने की सजी है उंगलियों में तो
हथकड़ी भूषित मगर मणिबन्ध है भैया

लोग इमला लिख रहे हैं भाषणों का ही
भाग्यलेखों का यही उपबन्ध है भैया

ज्योतिषीगण बाढ़ की चेतावनी दे दें !
ज्वार से ढहने लगा तटबन्ध है भैया

पेट भरा हो तो सूझे है, ताज़ा रोटी बासी रोटी
पापड़ ही पकवान लगे है, भूख न जाने सूखी रोटी

ऐंठी आँतों की नैतिकता, मोटे सेठों की नैतिकता
भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ हैं, रूखी रोटी चुपड़ी रोटी

घसियारों की इस बस्ती में, आदमखोरों की हस्ती में
रोज़ खून के भाव बिके है, काली रोटी गोरी रोटी

आधा तन फुँकता है मिल में, आधा नाचे है महफिल में
सब कुछ बेच कमा पाए हैं, टुकड़ा रोटी आधी रोटी

शासन अनुशासन सिखलाता, पर मालिक चाबुक दिखलाता
ससद बाँट-बाँट खाए हैं. नेता रोटी मन्त्री रोटी

लोकतन्त्र का वो दूल्हा है, जिसका ये फूटा चूल्हा है
तपे तवे से हाथ पके हैं, छाला रोटी छैनी रोटी

नैतिक पतन इसे मत कहना, अपराधी की ओर न रहना
सावधान ! ये हाथ उठे हैं, भाला रोटी बर्छी रोटी

राजपथों पर कोलाहल है, संविधान की वर्षगाँठ है
गली–गली में घोर गरल है, संविधान की वर्षगाँठ है

पैने हैं नाखून उन्हीं के, मुट्ठी में क़ानून उन्हीं के
उन्हें विखण्डन बहुत सरल है, संविधान की वर्षगाँठ है

शासन अनुशासन बेमानी, मंदिर-मस्जिद की मनमानी
रक्तपात की नीति सफल है, संविधान की वर्षगाँठ है

घर में आग लगाय जमालो, खड़ी-खड़ी मुस्काय जमालो
शान्तिचक्र ध्वज आज विकल है, सविधान की वर्षगाँठ है

कब तक जनता सहे अकेली, मरती खपती रहे अकेली
जनपथ से उमड़ा दलबल है, सविधान की वर्षगाँठ है

कुर्सी का उपदंश बढ़ चुका, वोट-नोट का वंश बढ़ चुका
शल्य-चिकित्सा केवल हल है, संविधान की वर्षगांठ है

रात उनके नाचघर में आ गई वर्षा
लोग कहते हैं, शहर में आ गई वर्षा

चीर दी फिर किस जनक ने भूमि की छाती
बिजलियाँ कड़कीं, अँधेर में आ गई वर्षा

बालकों को क्या पता अभिशाप क्या टूटे
वे समझते हैं कि वर में आ गई वर्षा

झोंपड़ी तक तो न पहुंची, छोड़कर संसद
लुट गई होगी डगर में, आ गई वर्षा

पड़ गईं इतनी दरारें, यह नई छत भी
काँपती आठों पहर में, आ गई वर्षा

पाप की जिन कोठियों में रोटियाँ गिरवीं
सब बदलती खण्डहर में आ गई वर्षा

ऊसरों में भी उगेंगी, अब नई फसलें
लहलहाती खेत भर में, आ गई वर्षा

आज हाथों को सुनो आरी बना लो साथियो
धूप के दुश्मन बड़े वट काट डालो साथियो

सिर्फ नारों को हवा में, मत उछालो साथियो
बोझ सबका साथ मिलकर सब उठालो साथियो

रौंदते सारी फ़सल को जानवर जो घूमते
सींग थामो और खेतों से निकालो साथियो

नाग डँसने लग रहे हैं देह धरती की, सुनो
तुम त्रिशूलों से इन्हें अब कील डालो साथियो

रोटियाँ ऐसे सड़क पर तो पड़ी मिलतीं नहीं
जो महासागर, उन्हीं को तह खँगालो साथियो

जो अँधेरे में भटकती पीढ़ियों का ध्रुव बने
दीप अपने रक्त से वह आज बालो साथियो

सो गए तो याद रखना, देश फिर लुट जायगा
अब उठो हर मोर्चे को खुद सँभालो साथियो

घर से बाहर नहीं निकलना, आज शहर में कर्फ्यू है
लक्ष्मण रेखा पार न करना, आज शहर में कर्फ्यू है

माना चीनी नहीं मिल रही, माना दूध नहीं घर में
फिर भी अच्छा नहीं मचलना, आज शहर में कर्फ्यू है

मस्जिद में अल्लाह न बोला, राम न मन्दिर में डोला
खून किया धर्मों ने अपना, आज शहर में कर्फ्यू है

सम्प्रदाय की मदिरा पीकर, आदम आदमख़ोर हुआ
छाया पर विश्वास न करना, आज शहर में कर्फ्यू है

नोट-वोट का शासन बोले, अलगावों की ही भाषा
इस भाषा को हमें बदलना, आज शहर में कर्फ्यू है

गिरे घरानों का अनुशासन, नारों का जादू टूटे
जनगण सीखे स्वयं सँभलना, आज शहर में कर्फ्यू है

हर दफ्तर में एक बड़ी सी, कुर्सी पाई जाती है
जिसके आगे बड़े-बड़ों की. कमर झुकाई जाती है

अंग्रेजों की बात नहीं है, यह अपना ही शासन है
सुनो ! पेट की ख़ातिर रेहन, रीढ़ धराई जाती है

मछुआरा हर 'बाँस' यहाँ पर, बाँसी-काँटा थामे है
रोज़ी का संकट भारी है, देह भुनाई जाती है

ठाली अफ़सर, खाली दफ्तर, घूम-घूमकर देखा है
गाल बजाए जाते हैं या, जय-जय गाई जाती है

सहने की सीमा होती है, कितना और सहें, यारो!
क्यों जनता कुलवधू बिचारी, मौन सताई जाती है

उठो, सत्य के पहरेदारो ! तोड़ झूठ के मयखाने
सौ-सौ संगीनें उठने पर, कलम उठाई जाती है

आग के व्यापारियों ने बाग को झुलसा दिया
और वे दुरबीन से उठती लपट देखा किए

साधुवेशी तस्करों ने शहर सारा ठग लिया
और वे लवलीन से सारा कपट देखा किए

साजिशों की सनसनाहट छप गई अखबार में
और वे ग़मगीन से खुफ़िया रपट देखा किए

द्रोपदी 'दुःशासनों' को नोंचती ही रह गई
और वे शौकीन से छीना-झपट देखा किए

लोग उनसे श्वेतपत्रों के लिए कहते रहे
और वे अतिदीन से बस श्यामपट देखा किए

चोरों का सम्मान, आजकल मेरे भैया
छेड़ नया अभियान, आजकल मेरे भैया

वोटों का भस्मासुर पीछे पड़ा हुआ है
ख़तरे में भगवान, आजकल मेरे भैया

साँपों के मुँह में बच्चों का खून लग गया
डरा हुआ ईमान, आजकल मेरे भैया

उतरे आदमखोर, गमकतो अमराई में
लेकर तीर कमान, आजकल मेरे भैया

अवतारों को राह जोहते, मुँह को बाए
गीता और कुरान, आजकल मेरे भैया

तिमिर तोड़ने को तकनीकें अंध पिता से
पूछ रहो सतान, आजकल मेरे भैया

फ़सल बचानी है ज़हरीले नख दन्तों से
बाँधो एक मचान, आजकल मेरे भैया

सुनो, बग़ावत कर रहे, अब सरसों के खेत
पीली-पीली आग नव, जागृति का संकेत

जो फसलों को रौंदते, फिरते अब तक प्रेत
गेहूँ की बाली प्रखर गुभ-चुभ करें अचेत

लोमड़ियाँ बसती रहीं, खोद मटर के खेत
फलियों ! तुम इस बार वे, खण्डित करो निकेत

पानी उनके घर गया, खेत हो गये रेत
'होले' से गोले बने, चने श्याम औ' श्वेत

करवट ले खलिहान ही, बाली-फूल समेत
मौसम कहे पुकार कर, रामचेत ! अब चेत

शहर तुम्हारा ? हमने देखा शहर तुम्हारा
शासक–चोर, लुटेरा–नेता शहर तुम्हारा

संगीनों की नोंक मिली जिस ओर गए हम
बख्तरबन्द पुलिस का पहरा शहर तुम्हारा

फुटपाथों को चना-चबेना मिल न सका पर
आदमखोर हुआ सब खाता शहर तुम्हारा

देह किसी ने बेची, कोई बच्चे बेचे
बदले में ठोकर ही देता शहर तुम्हारा

गाँवों के काँधे चिन दीं ऊँची मीनारें
लें अँगड़ाई तभी गिरेगा शहर तुम्हारा

की मनमानी भर आँखों में मोम सभी की
सूर्य उगा है अब पिघलेगा शहर तुम्हारा

धर्म, भाषा, जाति, दल का, आजकल आतंक है
इन सभी का दुर्ग टूटे, एक ऐसा युद्ध हो

भर दिया भोले मनुज के कण्ठ में जिसने ज़हर
वह प्रचारक मच टूटे, एक ऐसा युद्ध हो

नागरिक के हाथ में जो, द्वेष की तलवार दे
शब्द का वह कोष टूटे, एक ऐसा युद्ध हो

रंग के या नस्ल के हित, जो कि नक्शा नोंच दे
क्रूर वह नाखून टूटे, एक ऐसा युद्ध हो

खून का व्यवसाय करते, लोग कुर्सी के लिए
वोट की दूकान टूटे, एक ऐसा युद्ध हो

भीष्म-द्रोणाचार्य सारे, रोटियों पर बिक रहे
अर्जुनों का मोह टूटे, एक ऐसा युद्ध हो

काव्य को अंगार कर दे, भारती
शब्द हों हथियार, वर दे, भारती

हों कहीं शोषण–अनय-अन्याय जो
जूझने का बल प्रखर दे, भारती

सत्य देखें, सच कहें, सच ही लिखें
सत्य, केवल सत्य स्वर दे, भारती

सब जगें, जगकर मिलें, मिलकर चलें
लेखनी में शक्ति भर दे, भारती

हो धनुष जैसी तनी हर तेवरी
तेवरों के तीक्ष्ण शर दे, भारती

ऋषभ देव शर्मा । जन्म : 4.7.1957: गंगधाड़ी (खतौली), उत्तर प्रदेश । शिक्षा : पी-एच० डी० (हिंदी) । तेवरी संग्रह: ' तेवरी ' (गुलेल खण्ड) और ' तरकश ' । समीक्षा ' तेवरी चर्चा ' और हिन्दी कविता :आठवाँ नवाँ दशक ' । सम्पादन : ' पदचिन्ह बोलते हैं ' (कविता संग्रह), ' आदर्श कौमुदी ' - तमिल कहानी विशेषांक (अतिथि), ' कर्णवती ' - समकालीन तमिल साहित्य विशेषांक, ' कच्ची मिट्टी - 2 ' (सहयोगी), महिप पत्रिका (सह) । पत्र-पत्रिकाओं में कविता, कहानी, समीक्षा, शोधपत्र और धारावाहिक उपन्यास ' जीवन ज्योति ' प्रकाशित । तेवरी काव्यान्दोलन के प्रस्तोता के रूप में चर्चित । सम्प्रति: प्राध्यापक, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, खैरताबाद, हैदराबाद - 500004 (आंध्र प्रदेश) ।